गोरे-पादरियों

के

काले कारनामे

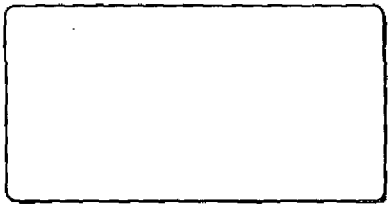

गुरु विरजानन्द दण्डी
सन्दर्भ पुस्तकालय
परिग्रहण क्रमांक ... 5251

मदनगोपाल सिंहल

तृतीय संस्करण ५०००
जून १९५६

मूल्य एक आना

प्रकाशक—
शिवदयालु
संचालक—ईसाई-मिशनरी अराष्ट्रीय-प्रचार निरोध-समिति
चाणक्यपुरी, मेरठ सदर।

गोरे पादरियों के काले कारनामे

—:o:—

आज से लगभग ४५० वर्ष पहिले की बात है !

२२ मई १४९८ को कालीकट के निकट मालाबार के तट पर पुर्तगाल का एक जहाज आ कर लगा। उसके नाविक वास्को-दे गामा ने भारत की भूमि पर अपना पहिला कदम रक्खा और कालीकट के हिन्दू नरेश ने अपने दोनों हाथ बढ़ाकर उस नाविक का स्वागत किया।

वास्को-दे-गामा ने कालीकट नरेश से उनके राज्य में रहने तथा व्यापार करने की आज्ञा चाही और उदार नरेश ने यह उसे प्रदान कर दी। सन् १५०० में कालीकट में पुर्तगालियों की कोठी बनकर खड़ी होगई, किन्तु उस समय यह कौन जानता था कि व्यापार की आड़में यह पुर्तगाली यहाँ भारत में अपना साम्राज्य स्थापित क उसे ईसाके चरणों में झुकाने आये हैं। उन्होंने कोठी की किलाबंदी की, एक फौजी अफसर को किलेदार नियुक्त किया और १५०६ में गोआ पर अधिकार कर लिया। देखते ही देखते मंगलोर, कच्चिन लंका, दिव, बम्बई के टापू और नेगापट्टन पर पुर्तगाली ध्वज फहराने लगा। अब उस ध्वज के नीचे ईसाई धर्म का प्रचार प्रारम्भ हुआ।

ईसाई पादरी राम और कृष्णके उपासकों को ईसा का पुजारी बनाने के लिये निकल पड़े। उसके हाथों में उनके पुर्तगाली शासव की आज्ञायें थीं, जिनमें लिखा था—

जो हिन्दू रविवार के दिन गिरजाघर में न जाये उसे बन्दी बनाकर कारागार में डाल दिया जाये।

यदि कोई हिन्दू अपने घर में हवन करता हुआ पाया जाये तो उसे मृत्यु का दण्ड दिया जाये।

प्रत्येक धनी हिन्दू प्रति मास राजभवन में जाकर नजर दे और जो ऐसा न करे उसका घर और धन जब्त कर लिया जाये।

जिस घरके बड़े का स्वर्गवास हो जाये उसके सभी बच्चों को ईसाई बना लिया जाये।

और इन सब साधनों का प्रयोग करने पर जिस गाँव में आधे से अधिक व्यक्ति ईसाई बन जायें उस गाँव के सभी हिन्दू मन्दिर गिरा दिये जायें और उनके मलवे से गिरजाघरों का निर्माण किया जाये।

ये और इसी प्रकार की अन्य आज्ञाओं को अपने साथ लेकर पुर्तगाली गोरे पादरी अपने अधिकार में किये गये प्रदेशों के गाँव गाँव में घूमने लगे और संगीनों तथा तलवारों के बल पर भारतीय हिन्दुओं को 'क्रास' चूमने के लिए बाध्य करने लगे।

जो भी व्यक्ति इन पादरियों के विरुद्ध कुछ कहने के लिए अपना मुँह खोलता था उसके मुँह में पुर्तगालियों की संगीने घुस जाती थीं और जो कुछ भी करने की कल्पना करता था उसे बड़े गिरजे के सामने वाले मैदान में कमर तक पृथ्वी में गाड़कर शिकारी कुत्तों से फड़वा दिया जाता था अथवा धधकती हुई अग्नि के बीच में खड़ा करके जिन्दा ही फूँक दिया जाता था।

धीरे धीरे वहाँ के देव-मन्दिर दृष्टि से लोप होने लगे और गिरजे अपना सर उठाने लगे। भारतीयों के बच्चे 'ईसूमसीह मेरे

प्राण बचैया' जैसे गीत गाते हुए सड़कों पर इधर उधर फिरने लगे।

'भारत में अंग्रजी राज्य' नाम के अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ में श्री सुन्दरलाल जी ने लिखा है "यह लोग (पुर्तगाली) कट्टर ईसाई थे और जिस देश पर भी इनका राज्य होता था वहाँ की प्रजा को ज़बरदस्ती ईसाई बना लेना वे अपना धर्म समझते थे। गोआ में उन्होंने अपनी गैर-ईसाई प्रजा को पकड़ २ कर और उन्हें ला मज़हब (विधर्मी) कहकर मार डालने और जिन्दा जला देने के लिये एक अदालत कायम कर रक्खी थी जिसे वे 'एक्वीज़िशन' कहते थे।"

इस प्रकार प्रारम्भ हुआ है आज अपने को प्रेम और शान्ति का दूत कहने वाले इन ईसाईयों के धर्म प्रचार का कार्य हमारे देश भारत की पुण्य भूमि पर।

गोआ का एक एक कण आज भी हमारे इस कथन की साक्षी दे रहा है। और उसके साथही हमारा साक्षी है १५४५ में पुर्तगाली भारत का गवर्नर अल्फेन्जो-दे-सूजा जिसने स्वतः स्वीकार किया है कि 'हम पुर्तगालियों ने एक हाथ में तलवार और दूसरे में सलीब (क्रास) लेकर ही भारत में प्रवेश किया था।'

× × ×

१५७६ में हिटवेंस नाम का प्रथम अंग्रेज़ पादरी भारत में आया। उसने अनेक भारतीय भाषाओं का अध्ययन किया और फेर कोंकणी भाषा में 'किश्चियन पुराण' नाम से एक पुस्तक भी लेखी। भारत में रहते हुए उसने यहाँ ईसाई धर्म के प्रचार के बेभिन्न पहलुओं पर भी विचार किया और फिर अपने देश को वापिस लौट गया।

१६०८ में सबसे पहले अंग्रेज़ी जहाज ने सूरत के बन्दरगाह

पर अपना डेरा डाला उनके नेता सर टामसमनरो ने देहली के मुगल सम्राट जहाँगीर के सामने दोनों घुटने टेककर जमीन चूमी और उससे अपने व्यापार के लिए अनेक सुविधायें प्राप्त करलीं।

धीरे-धीरे भारत में अंग्रेजों की संख्या बढ़ने लगीं और साथ ही साथ वे भारत में अपने धर्म के प्रचार की भी योजनायें बनाने लगे।

१८१३ में इङ्गलैंडसे एक चार्टर की घोषणा हुई जिसमें एक धारा यह भी रक्खी गई थी कि जो भी अङ्गरेज पादरी भारतीयों के धार्मिक उद्धार (?) अर्थात भारतीयों को ईसाई बनाने के लिये भारत जाना चाहे और वहाँ रहना चाहे उसे कानून के द्वारा सभी प्रकार की सुविधायें दी जाएं।

और इस आज्ञा का पालन करने के लिए ही ईसाई धर्म के प्रचारकों का एक सरकारी महकमा भी भारत में खोला गया जिसका नाम था 'एक्लेजियेस्टिकल डिपार्टमेंट'। इस महकमे का सारा खर्चा भारत के कोष से दिया जाता रहा।

× × ×

प्रचार का कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व अंग्रेजों ने देखा कि भारत में अनेक भाषायें बोली जाती हैं। अतः उन्हें विभिन्न भाषाओं में बाईबिल के अनुवाद की आवश्यकता का अनुभव हुआ। इसके लिये मार्किस वेल्जली ने १६ वीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में कलकत्ते के फोर्ट विलियम में एक कालिज की स्थापना की और उसी के द्वारा भारत की भिन्न भिन्न सात भाषाओं में इन्जील का अनुवाद कराया गया भारतीयों को शिक्षित करने के नाम पर खोला गया। यह कालिज भारत में ईसाई धर्म के प्रचार का मुख्य साधन था। वेल्ज़ली के

जीवन-चरित्र के लेखक मि० आर० आर० वीयर्स ने स्पष्टतया इसे स्वीकार किया है। और इन बाईबिलों के अनुवादों को लेकर अंग्रेज पादरी भारत के सुदूर प्रदेशों में फैल गये।

वेल्ज़ली ही नहीं उस काल के प्रायः सभी ही अंग्रेज शासकों में भारतीयों को ईसाई बनाने के सम्बन्ध में बड़ा उत्साह था और वे इसके लिये सदा ही नए नए आयोजन बनाते रहते थे।

मद्रास के गवर्नर के रूप में विलयम बेंटिङ्क ने भी अपने प्रांत में ईसाई मत के प्रचार के लिए बहुत कुछ किया।

उसने ईसाई प्रचारकों को अनेक प्रकार की सुविधायें दी जाने की आज्ञायें दीं :—

पादरी जहाँ भी जाना चाहें उन्हें वहाँ के पासपोर्ट शीघ्र ही दे दिये जायें।

ईसाई धर्म के सम्बन्ध में नोटिस, प्रचार-पत्रिकायें आदि सरकारी प्रेस से बिना कुछ लिये ही छाप दी जायें।

भारतीय सैनिकों में प्रचार करने की ईसाई पादरियों को खुली छूट रहे।

अपने कार्य-संचालन के केन्द्रों की स्थापना के लिये पादरियों को बड़ी बड़ी ज़मीनें बिना मूल्य ही दे दी जायें।

और साथ ही उसने अनेकों देशी रियासतों के दीवानों पर इस बात के लिये जोर दबाव भी डाले कि वे अपने अपने राज्यों में ईसाई धर्म के प्रचार के लिए पादरियों को विशेष सुविधायें प्रदान करें।

गवर्नर जनरल हो जाने पर बेटिङ्क ने अपने इस कार्य को और भी अधिक प्रगति दी। असंख्य प्राचीन मन्दिरों की माफ़ी

की जमीन और जायदादें छीन ली गईं। एक कानून बनाया गया जिसके अनुसार ईसाई हो जाने पर भी व्यक्ति का अपनी पैतृक सम्पति पर पूर्ववत् ही अधिकार स्वीकार किया गया तथा ऐसी आज्ञायें निकाली गई जिनसे जेलों में बन्द कैदियों को अपने धर्म में बने रहना असम्भव हो गया।

बेंटिङ्ग के पश्चात् लार्ड केनिङ्ग ने भी ईसाई मत के प्रचार कार्य में वैसा ही उत्साह बनाए रक्खा। उसने ईसाई पादरियों में लाखों रुपये बांटे तथा भारतीय खजाने से बिशपों और आर्क-बिशपों के बड़े बड़े वेतन दिये जाने की आज्ञायें दीं।

उसी के संकेत पर सरकारी दफ्तरों में अंग्रेज अफसर अपने मातहत भारतीयों पर ईसाई बनने के लिये ज़ोर दबाव डालने लगे। तथा ईसाई पादरी स्वतंत्रता पूर्वक अपने भाषणों में हिन्दू धर्म की निन्दा करने लगे तथा उनके देवी देवताओं को खुले आम गालियां देने लगे।

२२ मार्च १८३२ को इंगलैंड की पार्लियामेंट की एक सिलेक्ट कमेटी के सामने गवाही देते हुए कप्तान टी. मैकेन (Captain T. Macon) ने स्वीकार किया था कि 'इसमें कोई संदेह नहीं कि सरकार ईसाई पादरियों के साथ बड़ी रियायतें करती है। ये पादरी भारतीयों के धार्मिक विश्वासों की गली कूंचों तक में निन्दा करने में हद को पहुँच जाते हैं।'

× × ×

किन्तु इतना सब कुछ होने पर भी जनसाधारण में ईसाईयत के प्रति आकर्षण उत्पन्न न हो सका। भारतीय उतनी संख्या में ईसाई न बने जितना बनने की इन अंग्रेज पादरियों को आशा थी

अतः इङ्गलैंड के विद्वानों ने इस विषय पर गम्भीरता पूर्वक विचार आरम्भ किया।

मेकॉले (Macauly) ने इस सम्बन्ध में अपना मत प्रकट करते हुए लिखा कि 'भारत को ईसाई बनाने के लिए यह आवश्यक है कि हम उस देश में एक ऐसी श्रेणी उत्पन्न कर दें जो रंग की दृष्टि से भले ही हिन्दुस्तानी हो किन्तु जो अपनी रुचि, भाषा, भावों और विचारों में ईसाई हो।

और ऐसी श्रेणी उत्पन्न करने का जो साधन उसने बताया था वह था—भारत में अङ्गरेजी शिक्षा का प्रचार। क्योंकि उसका यह दृढ़ विश्वास था कि अंग्रेजी शिक्षा के द्वारा ही भारतीयों के हृदयों में सरलता पूर्वक ईसाईयत के प्रति श्रद्धा के भाव उत्पन्न किये जा सकते हैं। और मेकॉले की इस योजना पर अंग्रेजों के द्वारा इस देश में बहुत शीघ्र ही अमल भी प्रारम्भ कर दिया गया। स्थान स्थान पर अंग्रेजी शिक्षा के लिये स्कूल और कालिज खुलने लगे। और अपनी इस सफलता पर गर्व से उन्मत्त मेकाले ने अपने पिता को एक पत्र में लिखा—'मुझे पूरा विश्वास है कि यदि इस शिक्षा-योजना के अनुसार इसी प्रकार कार्य चलता रहा तो आज से तीस वर्ष पश्चात् ही बंगाल के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में से एक भी मूर्ति-पूजक (हिन्दू) न रहेगा·····।'

× × ×

१८४६ में अंग्रेजों ने पंजाब पर अधिकार किया तो उसी वर्ष से उसे एक आदर्श ईसाई प्रांत बनाने का प्रयत्न भी उन्होंने प्रारम्भ कर दिया।

सर हेनरी लॉरेन्स, सर जॉन लारेन्स, सर राबर्ट माण्ट-

गुमरी, कर्नल एडवर्ड और दूसरे पंजाब के शासक वहाँ ईसाई धर्म का प्रचार करने के सम्बन्ध में एक मत थे। वे चाहते थे कि सम्पूर्ण प्रान्त में सरकार अपने स्कूल कालिज बन्द करदे और शिक्षा का सारा कार्य ईसाई पादरियों को ही सौंप दे, साथ ही सरकार ईसाइयों द्वारा संचालित किये जाने वाली शिक्षा संस्थाओं को धन की भी अधिक से अधिक सहायता दे। इन सभी शासकों का स्पष्ट मत था कि ईसाई स्कूल तथा कालिज ही ईसाई धर्म के एकमात्र स्थायी प्रचार केन्द्र हो सकते हैं।

तत्कालीन गर्वनर जनरल लार्ड डलहौजी तथा ईस्ट इण्डिया कम्पनी के डायरेक्टर भी इस विचारधारा से सहमत थे। उनमें से कुछ तो यहाँ तक चाहते थे कि किसी भी सरकारी महकमे में हिन्दू त्यौहारों की छुट्टियाँ न दी जायें और हिन्दुओं के धार्मिक-कीर्तन आदि भी कानून द्वारा बन्द कर दिये जायें।

भारतीय सेनाओं को ईसाई बनाने की ओर भी इन लोगों का ध्यान विशेष रूप से जा रहा था। प्रसिद्ध इतिहासकार मि० नलोन ने लिखा है कि 'अंग्रेज सरकार सिपाहियों के धार्मिक भावों की अवहेलना करने लगी और बात बात में उनके धार्मिक नियमों आदि का उल्लंघन किया जाने लगा। यहाँ तक कि कम्पनी की सेना के अनेक अंग्रेज अफसर खुले तौर पर अपने सिपाहियों को धर्म परिवर्तन करने के कार्य में लग गये।'

बंगाल की पैदल सेना के एक अंगरेज कमांडर ने अपनी सरकारी रिपोर्ट में लिखा है कि—'मैं लगातार २८ वर्ष से भारतीय सिपाहियों को ईसाई बनाने की नीति पर अमल करता रहा हूँ और गैर-ईसाईयों की आत्माओं को शैतान से बचाना मेरे फौजी कर्तव्य का एक अंग रहा है।'

एक और इतिहासकार ने लिखा है कि '१८५७ के प्रारम्भ में हिन्दुस्तानी सेना के बहुत से करनल सेना को ईसाई बनाने के अत्यन्त घोर तथा दुष्कर कार्य में लगे हुए पाये गए। उसके बाद यह पता चला कि इन जोशीले अफसरों में से अनेक·····न रोजी के ख्याल से फौज में भरती हुए थे और न इसलिए कि फौज का कार्य उनकी प्रकृति के अनुकूल था बल्कि उनका केवल मात्र और एक मात्र उद्देश्य यही था कि इस जरिये से लोगों को ईसाई बनाया जाए।·····इन लोगों ने सिपाहियों में प्रचार करना और उनमें ईसाई पुस्तकों के अनुवाद और पत्रिकायें बाँटना प्रारम्भ किया। ·····वे इन लोगों पर जोर देने लगे कि अपने तैंतीस करोड़ कुरूप देवताओं को छोड़कर उनकी जगह एक सच्चे परमात्मा की और उसके बेटे ईसा की पूजा करो। मुहम्मद और राम को वह दगाबाज और पक्के धूर्त बतलाने लगे।·····धीरे-धीरे इन धर्म-प्रचारक करनलों ने सिपाहियों को रिश्वतें देकर उन्हें ईसाई बनाना शुरू किया और ईसाई बनने वालों को तरक्की अथवा दूसरे इनामों का भी लालच दिया। इस काम में उन्होंने अफसरी प्रभाव का भी उपयोग किया। उन्होंने सिपाहियों से वायदा किया कि हर सिपाही जो अपना धर्म छोड़ देगा हवलदार बना दिया जायेगा और हवलदार को सूबेदार मेजर बना दिया जायेगा आदि।'

(Causes of the Indian Revolt, Published from London dy Edward Stamford, 6 Chering Cross)

ईसाई धर्म के सफल प्रचार के लिए इन अंगरेज शासकों ने यह भी आवश्यक समझा कि भारतीयों की धार्मिक भावनाओं को भी नष्ट किया जाये।

वे जानते थे कि प्रायः सभी हिन्दू विदेशी औषधियों से परहेज करते हैं, अतः उन्होंने सभी को उन्हीं औषधियों को प्रयोग करने के लिए बाधित करने का प्रयत्न किया। सहारनपुर में सबसे पहला अंग्रेजी अस्पताल बना तो अंग्रेज अधिकारियों की ओर से आज्ञा निकाली गई कि 'प्रत्येक व्यक्ति को रोगी होने पर इसी अस्पताल से औषधि लेनी होगी। नगर का कोई भी वैद्य अथवा हकीम किसी भी रोगी को कोई औषधि नहीं दे सकेगा।'

(Narrative of the Indian Revolt, P. 359)

वे यह भी जानते थे कि हिन्दू गाय को पवित्र मानते हैं और इसलिये उस की चरबी, मांस आदि से परहेज करते हैं। अतः उन्होंने हिन्दू के हृदय में अनन्त काल से प्रतिष्ठित गाय के प्रति उनकी धार्मिक भावना को नष्ट करने के उद्देश्य से ही सेनाओं में गाय की चरबी लगे कारतूस देने प्रारम्भ किये।

[अनेक अंग्रेज एतिहासकारों ने कारतूसों में गाय की चरबी के प्रयोग की बात को कल्पित लिखा है किन्तु यह एक ध्रुव सत्य है कि उन कारतूसों में गाय की चरबी का प्रयोग होता था। सन् १८५७ की क्रांति का सबसे अधिक प्रामाणिक इतिहास लेखक सर जॉन ने स्पष्ट लिखा है कि 'इसमें कोई संदेह नहीं कि इन कारतूसों के बनाने में जिस चिकने मसाले का प्रयोग होता था उसमें गाय की चरबी इस्तेमाल की जाती थी।'

सर जॉन ने यह भी लिखा है कि 'दमदम के कारखाने में जिस ठेकेदार को कारतूसों के लिये चरबी का ठेका दिया गया था उसके ठेके के कागज में यह साफ शब्दों में लिखा लिया गया था

कि मैं गाय की चरबी लाकर दूँगा' और चरबी का भाव चार आने सेर नियत किया गया था।'—'भारत में अङ्गरेजी राज्य']

और भारत में रहने वाले अंग्रेज यह सब कार्य अपने अधिकारियों के संकेत पर ही कर रहे थे।

ईस्ट इंडिया कम्पनी के अध्यक्ष मि० मैङ्गल्स (Mr. Mangles) ने १८५७ में पार्लियामेंट में भाषण करते हुए स्पष्टतया कहा था कि- 'परमात्मा ने हिन्दुस्तान का विशाल साम्राज्य इङ्गलिस्तान को सौंपा है इसलिए ताकि हिन्दुस्तान के एक सिरे से दूसरे सिरे तक ईसा मसीह का विजयी झण्डा फहराने लगे। हम में से हरएक को अपनी पूरी शक्ति इस काम में लगा देनी चाहिए, ताकि समस्त भारत को ईसाई बनाने के महान् कार्य में देश भर के अन्दर कहीं पर भी किसी कारण जरा भी ढील न होने पाये।'

और यही बात उस समय के एक दूसरे विद्वान् रेवरेण्ड कनेडी (Rev. Kannedy) ने भी कही थी। उन्होंने लिखा था कि— हम पर कुछ भी आपत्तियां क्यों न आएँ जब तक भारत में हमारा साम्राज्य कायम है तब तक हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि हमारा मुख्य कार्य इस देश में ईसाई मत को फैलाना है। जब तक रासकुमारी से लेकर हिमालय तक का सारा हिन्दुस्तान ईसा के मत को ग्रहण न कर ले और हिन्दू तथा मुसलमान के धर्मों की निन्दा न करने लगे तब तक हमें लगातार प्रयत्न करते रहना चाहिए। इस कार्य के लिये हम जितने भी प्रयत्न कर सकें, हमें करने चाहियें और हमारे हाथों में जितने भी अधिकार हैं और जितनी भी सत्ता है उसका इसी के लिए उपयोग करना चाहिये।'

इङ्गलैंड के इन्हीं संकेतों के आधार पर भारत के अङ्गरेज

आफिसरों ने यहाँ ईसाईयत के प्रचार में अपने अधिकारों का उपयोग करते हुए प्रायः सभी प्रकार के उचित मार्गों का अवलम्बन लिया। भारतीय व्यथित हो उठे और उसका परिणाम हुआ १८५७ की महती क्रांति, जिसमें प्रत्येक धर्म-प्रेमी ने इन धर्म विरोधी विदेशियों का जुआ अपने कन्धे से उतार फेंकने का भरसक प्रयत्न किया।

अंग्रेज शासक इस क्रांति के मूल कारणों को अच्छी तरह जानते थे और यही कारण था कि क्रांति का दमन कर भारत को अपने फौलादी शिकंजे में जकड़ लेने के पश्चात भी उन्हें धार्मिक निरपेक्षता की घोषणा करनी पड़ती है। किन्तु अंग्रेज पादरियों के द्वारा अब तक भारतीयों के धर्म को नाश करने और ईसाईयत के प्रचार को प्रोत्साहन देने का जो कार्य हो चुका था वह इतना अधिक था कि भारतीयों पर सम्राज्ञी की इस घोषणा का कोई भी विशेष प्रभाव न पड़ा और पड़ता भी कैसे? घोषणा केवल घोषणा ही थी, उससे ईसाई पादरियों द्वारा भारतीयों के धर्म में हस्तक्षेप के कार्य में कोई भी अन्तर नहीं आया था।

अपना प्रचार-कार्य अबाध रूप से चालू रखने के सम्बन्ध में उठी शङ्काओं को निर्मूल करने के लिये, क्रांति के दमन के थोड़े ही पश्चात् केण्टरबरी के बड़े पादरी के नेतृत्व में अंग्रेज पादरियों का एक डेपूटेशन इङ्गलैंड के तत्कालीन प्रधान मन्त्री लार्ड पामर्सटन (Lord Palmerston) से मिला। और उन्होंने उन पादरियों को आश्वासन देते हुए स्पष्टतया बतलाया कि—'अन्तिम लक्ष्य के विषय में हम सबका एक ही मत है समस्त भारत में पूरब से पश्चिम तक और उत्तर से दक्षिण तक ईसाईयत फैलाने में

में जहाँ तक हो सके सहायता करना न केवल हमारा कर्तव्य है किन्तु इसी में हमारा हित भी है । (The Conversion of India by George Smith, P. 233.)

क्रांति के पश्चात भारत में कंपनी के अधिकार के स्थान पर इङ्गलैंड के बादशाह का साम्राज्य स्थापित हुआ किन्तु अंग्रेज पादरियों को राज्य का आश्रय पूर्ववत् ही बना रहा । भारत के खजाने से प्रति वर्ष अपार धन राशि उन्हें ईसाई धर्म के प्रचार के लिए मिलती रही । पादरियों ने उस धन की सहायता से मानव-सेवा के नामपर अनेकों स्कूल,कालिज तथा अस्पतालों की स्थापना की और उनकी आड़ में उन्होंने अपने धर्म प्रचार का कार्य चालू रक्खा। ईसाई शिक्षा-संस्थाओं में बाईबिल की शिक्षा दीजाती रही। हिन्दू देवी देवताओं का मखौल उड़ाया जाता रहा और बालकों को ईसाई बनाने के लिये प्रोत्साहित किया जाता रहा । यह खेद की बात है कि आज जबकि अंग्रेजों की राजनैतिक सत्ता भारतमें समाप्त हो गई है और अपना देश स्वतन्त्र है तब भी ईसाई पादरियों का अपना कार्य-क्रम उसी प्रकार चल रहा है ।

हमने अपने भारतीय राज्य को धर्म-निरपेक्ष राज्य घोषित किया है और उसी का अनुचित लाभ उठा कर यह विदेशी पादरी पहले की अपेक्षा और भी अधिक संख्या में तथा और भी उत्साह से अपने प्रचार कार्य में लग गये हैं।

पूर्ववत् ही आज भी विदेशों के ये गोरे पादरी भारत में निर्धनों को धन देकर,नंगो को वस्त्र देकर, बेकारों को रोजगार का आश्वासन देकर, चमत्कारों से शीघ्र ही प्रभावित हो जाने वाले भोले-ग्रामीणों को चकमा देकर, नासमझ छोटे-छोटे बालकों

को बहकावा देकर और विद्यार्थियों को शिक्षा के नाम पर ईसा के चरणों की भक्ति और अनुरक्ति देकर हम भारतीयों को अपने धर्म से पतित कर रहे हैं। इतना ही नहीं किन्तु हमारे देवमन्दिरों को भी ये लोग भ्रष्ट और नष्ट करने से नहीं चूकते।

गांधीजी ने अपने जीवन काल में एक विदेशी महिला-पादरी से बातें करते हुए उसे बताया कि 'अभी उस दिन एक पादरी अपनी जेबों में रुपए भरकर अकाल पीड़ित क्षेत्रों में गया वहाँ उसने भूखों को वह धन बांटा और बाद में उन्हें ईसाई बनाया। साथ ही उसने उनके मन्दिर पर भी अधिकार किया और उसे तोड़ डाला। क्या यह अत्याचार नहीं ? जो व्यक्ति ईसाई बन चुके थे, उनका उस मन्दिर पर कोई अधिकार नहीं रह गया था और न ही पादरियों से उस मन्दिर का कुछ सम्बन्ध था किन्तु इन पादरियों ने उस मन्दिर को उन्हीं व्यक्तियों के हाथ से नष्ट कराया जो उससे कुछ समय पहिले तक उसमें ईश्वर का निवास मानते थे।'

(Hindustan Times, June 4, 1944)

इन ईसाइयों की मन्दिरों को नष्ट करने की प्रवृत्ति के सम्बन्ध में गांधी जी के उपरोक्त कथन से अधिक और क्या प्रमाण हो सकता है ? पिछले दो-तीन वर्षों में ही ट्रावनकार में कितने प्रमुख देवमन्दिर इन पादरियों ने तोड़े हैं अथवा जला दिये हैं।

५ अप्रैल १९५४ को भारतीय लोक-सभा में भाषण देते हुए स्वर्गीय सरदार बल्लभभाई पटेल की सुपुत्री कुमारी मणिबेन पटेल ने ईसाई पादरियों पर बल-पूर्वक धर्म परिवर्तन का आरोप लगाते हुए सरकार को बतलाया कि 'मसूरी के वुडास्टाप स्कूल में छोटे बच्चे बोर्डिङ्ग में रहते हैं। वहाँ उन बच्चों को ईसाई बनाया

जाता है। ..... हरिजनों को ईसाई बनाने के पश्चात् उन्हें काफी अर्से तक दूसरे व्यक्तियों से मिलने नहीं दिया जाता' इत्यादि। साथ ही उन्होंने यह भी बताया था कि 'स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भी दक्षिण भारत में बड़ी संख्या में लोगों को बल पूर्वक ईसाई बनाया जा रहा है'। (हिन्दुस्तान, ६ अप्रैल १९५४)

आजकल ये अंग्रेज और अमरीकन पादरी हिंदुओं को धर्मभ्रष्ट करने और उन्हें बहकाने के लिये घृणित से घृणित मार्गों का अवलम्बन कर रहे हैं।

बंगाल राज्य कांग्रेस के अध्यक्ष श्रीअतुल घोष के सभापतित्व में होने वाले एक सम्मेलन में भाषण देते हुए कारसियाग क्षेत्र के प्रतिनिधि श्री जोखीराम ने बताया कि 'यहाँ के मिशनरी स्कूल गाय का मांस खाने वाले बच्चों को फीस में ५) रु० मासिक की रियायत देते हैं।' (हिन्दुस्तान १३ जून १९५३)

और इसी प्रमुख राष्ट्रीय दैनिक पत्र में एक दिन यह समाचार भी प्रकाशित हुआ कि मथुरा जिले के किसी गाँव में एक स्कूल और एक अस्पताल बना कर पादरियों ने उस गाँव के समस्त निवासियों को ईसाई बना लिया और साथ ही मथुरा के कोर्ट में इस इकरारनामे को नियमानुसार रजिस्ट्री भी करा लिया कि 'यदि इस गाँव का कोई भी व्यक्ति पुनः हिन्दू बन जायगा तो उस गाँव के निवासियों को वह समस्त धन पादरियों को वापिस देना होगा जो उस समय तक उस गाँव में उनका खर्च हुआ होगा।' आश्चर्य की बात यह है कि यह रजिस्ट्री भारतके स्वतन्त्र होने के पश्चात् हुई है।

इसी प्रकार की और भी अनेक घटनायें इस समय भी भारत

के कोने-कोने में घटित हो रही हैं।

२६ मई १६५४ के 'हिन्दुस्तान' में प्रकाशित हुआ है कि 'आज कल विदेशी पादरी पहाड़ी इलाकोंमें रुपया पानीकी तरह बहा रहे हैं और वहाँ की अपढ़ गरीब जनता की अनभिज्ञता से अनुचित लाभ उठा रहे हैं। ये पादरी लोग वहाँके लोगों को कपड़े, दवाई और पैसों का लालच देकर उन्हें अपने धर्म से पतित करने और ईसाई बनानेका प्रयत्न करते हैं। उदाहरण के लिये पादरी हजरत मसीह, भगवान राम, भगवान कृष्ण, भगवान शँकर की मूर्तियां उन के सामने रखते हैं। इनमें हजरत मसीह की मूर्ति किसी धातुकी बनी रहती है जबकि हिन्दू देवी देवताओं की मूर्तियां किसी लकड़ी की बनी रहती हैं और तमाम पर लकड़ी का सा पालिश होता है। इन को सामने रखकर भोले भाले लोगों को कहा जाता है कि इन सब को आग में जलाते हैं। जो जल जायेगा वह देवता झूठ होगा और जो न जलेगा वह देवता सच्चा होगा। चूंकि हजरत मसीह की मूर्ति धातु की होती है इसलिए वह नहीं जलती जबकि दूसरी जल जाती हैं, और इस तरह हिन्दू देवी देवताओं के विरुद्ध प्रचार किया जाता है। ··· भिन्न भिन्न मिशन स्कूलों, कालिजों अस्पतालों के लिये जो ग्रांट (सरकारी सहायता) सरकार की तरफ से मिलती उसका भी अनुचित उपयोग किया जाता है। फोस और ग्राण्ट जो इन संस्थाओं को चलानेके लिये खर्च की जाती रहती है और इनके संस्थाओं को चलाने के लिये जो रुपया विदेशों से आता है उसे ये पादरी ईसाईयत के लिये खर्च करते हैं। कई दशाओं में शिक्षार्थियों को मजबूर किया जाता है कि वे गिरजाघर जायें और बाईबिल पढ़े। ··· जिन लोगों ने इस दिशा में अध्ययन किया है वे जानते हैं कि इन विदेशी पादरियों की सरगर्मियां किस तरह बढ़ रही हैं।

जहाँ बटवारे के पहिले सतरह सौ (१७००) विदेशी पादरी थे वहाँ इस समय पैंतालीस सौ (४५००) हैं। इनके पास बहुत रुपया भी है .....।'

आसाम के पहाड़ी इलाकों में काम करने वाले एक दूसरे महानुभाव ने अपने एक वक्तव्य में बताया है कि 'भारतके इन भागों में विदेशी मिशनरियों ने गिरजाघरों का एक जाल सा बिछा रक्खा है। बस्ती से दूर जङ्गलों में १५-१५, २०-२० मीलों की दूरी पर इन्होंने अपने गढ़ स्थापित किये हुए हैं। वह अपनी शक्ति के सामने किसी को भी कुछ नहीं समझते। सरकारी कर्मचारी तक इनके केन्द्रों में आते डरते हैं। हर पादरी के पास एक मोटर साइकिल होती है। पिस्तौल आदि से यह व्यक्ति हर समय लैस रहते हैं। ये लोग गाँवों में घुस जाते हैं और जबरन वहाँ के निवासियों की चोटियाँ काटते हैं। जो व्यक्ति इनके काम में रुकावट डालता है उसे ये पादरी पकड़ कर ले जाते हैं और अपने गढ़ों में कैद कर देते हैं। वहाँ उस पर अनेक प्रकार के अमानुषिक अत्याचार किये जाते हैं। ऐसे काण्ड यहाँ रात दिन होते रहते हैं।

ग्रामीण लोग प्रायः जंगली होने के कारण भूत प्रेतों पर अधिक विश्वास करते हैं। पादरी लोग उनसे कहते हैं कि भूत चोटी में रहता है। अगर इसे न कटवाओगे तो सदैव बीमार ही रहोगे। चोटी वाले व्यक्ति को ये पादरी अपने दवाखानों से औषधि भी नहीं देते।

इन पादरियों ने जगह जगह बैंक भी खोल रक्खे हैं जहाँ ये वहाँ के मूल-निवासियों को ऋण देते रहते हैं। व्याज ज्यादा बढ़ जाने पर ये पादरी उनसे कहते हैं कि ईसाई बन जाने पर व्याज छोड़ दिया जायेगा। और इस प्रकार ऋण भार से दबे वे व्यक्ति

ईसाई बन जाते हैं।' (सत्पथ वर्ष १ अङ्क ६-७)

और केवल पहाड़ी इलाकों में ही नहीं भारत के और दूसरे राज्यों में भी पादरियों का यही कार्यक्रम चल रहा है। २२ जौलाई १९५४ के हिन्दुस्तान का एक समाचार है कि 'रामपुर में अमरीकी पादरी गरीबों को धन का लालच देकर हजारों की संख्या में ईसाई बना रहे हैं। .....पादरी उन व्यक्तियों की चोटियाँ काट कर धर्म परिवर्तित लोगों की संख्या के प्रतीक रूप अमरीका भेज देते हैं।

हम समझते हैं कि इस सम्बन्ध में और कुछ अधिक कहना आवश्यक नहीं है।

× × ×

अब हम इस प्रश्न पर एक दूसरे पहलू से विचार करेंगे।

शङ्का होती है कि क्या ये अंग्रेज पादरी केवल अपने धर्म प्रचार के लिए ही भारतीयों को ईसाई बनाते हैं? इसके पीछे इन की कोई राजनैतिक आकांक्षा तो काम नहीं कर रही है? यह शङ्का भी निराधार नहीं है। यदि हम गत शताब्दि के भारतीय इतिहास पर सूक्ष्म रूप से दृष्टिपात करें तो हमें इस बात के अनेक पुष्ट प्रमाण मिलते हैं? इस विदेशी पादरियों ने धर्म की आड़ में हमारी राष्ट्रीयता को भी नष्ट करने का पूरा प्रयत्न किया है। ईसाईयत के नाम पर इन्होंने कितनी ही बार भारतीयों को भारतीयों से युद्ध करने के लिये विवश किया है।

सिराजुद्दौला के शासन काल की बात है—

नबाब की सेना में कितने ही भारतीय ईसाई नौकर थे। अंग्रेजों से युद्ध छिड़ा तो अंग्रेज पादरियों ने फतवे निकाले कि कोई भी ईसाई किसी भी गैर-ईसाई का पक्ष लेकर अपने सह-धर्मियों

से युद्ध न करे। यदि वह युद्ध करेगा तो महा-पाप का अपराधी होगा। ये फतवे गुप्त रूप से सिराजुद्दौला के ईसाई सैनिकों में बांटे गये जिसके परिणाम स्वरूप सेना में बहुत बड़ी संख्या में देश-द्रोही पैदा हो गये। युद्ध के समय इन सभी ईसाई सैनिकों ने अपने देश और अपने शासक के साथ विश्वासघात किया।

और फिर मीर कासिम के शासन में भी पुनः इसी प्रकार की घटना घटी। उसकी सेना में भी ईसाई नौकर थे और बड़े बड़े पदों पर नियुक्त थे। बाहर के अंग्रेजों ने उनसे अपना गुप्त सम्पर्क स्थापित किया, जिसके परिणामस्वरूप युद्ध के समय ये भारतीय ईसाई सैनिक एक रात नवाब की सेना को छोड़कर अंग्रेजों से जा मिले और उसी रात को नबाब की सेना पर टूट भी पड़े। मीर कासिम के पन्द्रह हजार सैनिक उस रात में काम आये और उसकी चार सौ तोपें अंग्रेजों के हाथ लगी।

और फिर उसके पश्चात् हैदरअली के साथ भी यही हुआ। हैदर ने अपने राज्य में अंग्रेज पादरियों को अपने धर्म प्रचार की अनेक सुविधायें दे रक्खीं थी जिनके परिणाम स्वरूप सागर तट के बहुत से लोगों ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था। हैदर की सेना में अनेक ईसाई भी नौकर थे।

ईसाई पादरियों ने धीरे-धीरे सेना के इन ईसाइयों को अंग्रेजों के पक्ष में कर लिया। हैदर को यह समाचार ज्ञात हुआ तो उसने अपनी सेना के सभी ईसाई सैनिकों को एकत्रित किया और उनसे कहा कि 'यदि तुम अपने सहधर्मियों से युद्ध करना न चाहो तो तुम अभी नौकरी छोड़कर जा सकते हो, मुझे इसमें कुछ भी आपत्ति न होगी। इसपर उन ईसाइयों ने बाइबिल और क्रास उठा

कर अपने शासक हैदरअली के प्रति विश्वासी रहने की शपथ ली। हैदर ने भी इन पर विश्वास कर लिया। किन्तु ईसाई पादरियों ने अपने हस्ताक्षरों से फिर एक फतवा निकाला जिस में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि 'गैर ईसाई के सामने इंजील और सलीब लेकर भी खाई गई कसमों का पालन करने के लिये कोई ईसाई बाध्य नहीं है।' यह फतवा फिर हैदरअली की सेनाओं में बांटा गया। परिणाम यह हुआ कि युद्ध में इन ईसाइयों ने हैदर के साथ विश्वासघात किया और अंग्रेजों का पक्ष लिया।

और आज से पहिले ही पहिले ऐसा हुआ हो यह बात भी नहीं है। अभी भी हमारे देश के पहाड़ी इलाकों में यह अंगरेज पादरी वहाँ के मूल निवासियों की आड़ में अपने लिये नागा स्टेट तथा झार-खण्ड नाम आदि से पृथक् राज्य की स्थापना के दुःस्वप्न देख रहे हैं क्योंकि झारखण्ड प्रथम प्रांत बनते ही वहाँ ईसाई मिनिस्ट्री बन जाना सुनिश्चित ही है और ऐसी परिस्थिति में ही वे भारत में एक नवीन ईसाई स्थान बनाने में समर्थ हो सकते हैं।

पादरियों का विश्वास है कि ईसाई हो जाने पर व्यक्ति न केवल अपना धर्म परिवर्तित करता है किन्तु उसकी राष्ट्रीयता का भी परिवर्तन हो जाता है। अतः ये पादरी किसी भी भारतीय को ईसाई बनते ही उसे अपने साम्राज्य का हितचिंतक समझने लगते हैं और ऐसा होता भी है। ईसाई हो जाने पर वह व्यक्ति भी भारत की अपेक्षा अपने को ईसाई देशों से अधिक निकट समझने लगता है।

१८५७ की क्रांति पर टीका करते हुए अनेक पादरियों ने लिखा भी था कि 'इस क्रान्ति में हमारे दुश्मन थे वे मुसलमान जिनके मजहब की तारीफ करके हमने उन्हें फुला दिया था और थे वे हिंदू

जिनके अन्ध-विश्वासों को हमने पुष्ट किया था किन्तु हमारे मित्र थे केवल वे हिन्दुस्तानी जिन्हें हमारे पादरियों ने ईसाई बना लिया था।

एक दूसरे पादरी ने भी बड़े गर्व से लिखा था कि 'एक भी देशी ईसाई विद्रोह में शामिल नहीं हुआ । कई जगह तो इन देशी ईसाईयों ने उचित समय पर खबर देकर षडयन्त्रों को रोकने में मदद दी।' (The Land of the Vedas p. 464)

विलियम एडवर्ड ने भी—जो क्रांतिके दिनों में भारत में ही था और बाद में हाई कोर्ट का जज भी हो गया था—यही लिखा है। उसकी सम्मति थी कि 'हमारे लिये अपनी रक्षा का सब से अच्छा उपाय यह है कि हम इस देश को ईसाई बना लें..... देशी ईसाईयोंकी बस्तियां जब इधरउधर फैल जायेंगी तो वे अनेक वर्षों तक हमारी मजबूती के लिये स्तम्भों का काम देंगी क्योंकि जब तक अधिकांश जनता मूर्तिपूजक (हिन्दू) या मुसलमान रहेगी तब तक वे ईसाई लोग अवश्य ही राज्य भक्त रहेंगे।

हमारे इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि अंगरेज पादरियों द्वारा यहाँ अपने धर्म के प्रचार करने का एक मुख्य उद्देश्य अंग्रेजी साम्राज्य को दृढ़ और स्थायी बनाना भी है। और इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए यदि हम अपने देश की वर्तमान राजनैतिक स्थिति पर भी विचार करें तो यह अनुचित न होगा कि ईसाई पादरियों के इस दुश्चक्र को कैसे तोड़ा जावे।

कल तक अपने ही देश का एक भाग किन्तु अब अपना पड़ौसी देश पाकिस्तान आज अमरीका से सांठ-गांठ कर रहा है। हमारे सभी नेता इसे जानते हैं और उससे सावधान भी हैं और इधर हमारे देश में अमरीकन मिशन यहाँ की जनता को अपने पैसे के

बल पर ईसाई बनाने में जुटा हुआ है और हजारों की संख्या में दैनिक भारतीयों को ईसाई बना रहा है।

अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के अध्यक्ष श्री एन. सी. चटर्जी के कथनानुसार स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् अबतक लगभग दस लाख हिन्दू ईसाई बन चुके हैं।

ईश्वर न करे यदि किसी दिन अमरीका को आगे या पीछेकर पाकिस्तान ने हमारे देश की ओर आँखें उठाई तो क्या अमरीका के धन को लेकर ईसाई बनने वाले हमारे अपने भारतीय भारत के साथ गद्दारी न कर बैठेंगे। यदि पिछला इतिहास सच्चा है तो आगे भी ऐसा अवश्य होगा, यह हमारा विश्वास है।

ऐसी परिस्थिति में अपनी राष्ट्रीयता की रक्षा के लिये भी हमें इन विदेशी पादरियों का प्रचार अपने देश में रोकना ही पड़ेगा। इसी में हमारा, हमारे धर्म का और हमारे स्वतंत्र राष्ट्र का कल्याण और हित निहित है।

हमारे शासकों का कर्तव्य है कि वे भी समय रहते चेतें और इस समस्या पर गम्भीरता पूर्वक विचार करें। नहीं तो पीछे पछताना ही पड़ेगा और कठिनाई से पाई स्वतन्त्रता नष्ट हो जावेगी और भारतीय जनता और भी दुख में पड़ेगी।

गुरु विरजानन्द दण्डी
सन्दर्भ पु...
5251
...ग्रहण क्रमांक
...नन्द ...

श्री लक्ष्मी प्रिंटिंग प्रेस, रोशनारा बाग के सामने देहली में मुद्रित,